"Knowledge Scholar"
An International Peer Reviewed E-Journal Of Multidisciplinary Research
Volume: 03, Issue: 06, Nov. – Dec. 2016 eISSN NO. 2394-5362
Impact Factor (SJIF) - 4.567

दसवें दशक के उपन्यास

डॉ.ललिता राठोड

हिंदी विभाग
बलभीम महाविद्यालय, बीड

साहित्य की विधाओं में उपन्यास विधा का विशेष महत्व रहा है। जीवन का यथार्थ चित्रण सशक्तता के साथ चित्रित करने में इस विधा को अत्याधिक सफलता प्राप्त हुई है। उपन्यास के कथ्य एवं शिल्प के आज विविध रुप दिखायी देते हैं। इन विविध रुपों के कारण उपन्यास विधा का विकास तो हुआ ही है, साथ ही साथ साहित्य की यह केंद्रीय विधा बनती जा रही है।

हिंदी उपन्यास की दृष्टि से दसवॉ दशक अनेक दृष्टियों से विशेष रहा है। एक तो इस काल में विविध प्रवृत्तियों के आधार पर अनेक उपन्यास लिखें गए है। उत्तर आधुनिकता, सूचना क्रांति का विस्फोट सांम्प्रदायिकता का उफान, दलितों की अभिव्यक्ति, आर्थिक उदारीकरण और अपसंस्कृति के प्रसार के कारण दसवें दशक में अनेक रचनाकार उपन्यास साहित्य विधा के प्रति अत्यंत गंभीर रहे हैं। इसी गंभीरता के कारण दसवें दशक में अनेक उत्कृष्ठ औपन्यासिक कृतियों की निर्मिती हुई है।

इस कालखंड में सांप्रदयिकता उपन्यास, व्यवस्था विरोधी उपन्यास, दलित विमर्श के उपन्यास, शहरी जीवन, मध्यवर्ग से संबंधित एवं निम्नवर्ग से संबंधित उपन्यास, राजनीतिक उपन्यास एवं ग्रामांचल पर आधारित उपन्यास अत्यंत महत्वपूर्ण रहे हैं। यही कारण है कि दसवें दशक में उपन्यास विधा का प्रभुत्व बढ़ा हुआ है। इसलिए यह कहा जाता है कि, दसवॉ दशक उपन्यास का माना जाता है। यह इसलिए कहा जाता है कि, दसवें दशक के जटिल जीवन, को साकार करने में उपन्यास विधा अत्यंत सक्षम रही है। इसी सक्षमता के कारण ही इस अवधि के उपन्यासों ने समसामयिक जीवन की यथार्थता को अत्यंत सूक्ष्म रुप में अंकित किया है।

साम्प्रदायिक भयानकता को चित्रित करनेवाले उपन्यास भगवानसिंह का 'उन्माद' नासिरा शर्मा का 'जिंदा मुहावरे' कमलेश्वर का 'कितने पाकिस्तान' और अब्दुल बिस्मील्ला का 'मुखडा क्यों देखे' इस काल के यह अत्यंत सशक्त उपन्यास है। पुरे सामर्थ्य के साथ इन उपन्यासों में साम्प्रदायिकता अंकन हुआ है।

http://www.ksijmr.com

व्यवस्था विरोधी उपन्यास विभूति नारायण राव रचित 'किस्सा लोकतंत्र' श्रवण कुमार गोस्वामी का 'एक टुकडा सच' गिरिराज किशोर का 'यातना घर' राजीव कुमार का 'आर्तनाद' और मस्तराम कपुर का 'एक सही बांझ' इस काल के व्यवस्था विरोधी के प्रभावी उपन्यास है।

दलित चेतना को आधार बनाकर लिखे हुए उपन्यासों में जयप्रकाश कर्दम का 'छप्पर' सत्यप्रकाश का 'जसतस भई सेवर' प्रेम कपाडिया का 'माटी की सौगंध' तेजिंदर का 'उस शहर तक' राकेश वत्स का 'नरदंश' आदि उल्लेखनीय कृतियां है।

इस काल में नारी को केंद्रित मानकर लिखे हुए उपन्यासों में सुरेन्द्र वर्मा 'मुझे चॉद चाहिए' प्रभा खेतान का 'छिन्नमस्ता' सूर्यबाला का 'यामिनी कथा' अलका सरावगी का 'कलिकथा वाया बाईपास' नासिरा शर्मा 'शाल्मली' मृदुला गर्ग 'कठगुलाब' और शिवप्रसाद सिंह का 'औरत' इस काल की उत्कृष्ठ औपन्यासिक रचनाएँ है।

मध्य वर्ग को आधार बनाकर लिखी हुई इस काल की औपन्यासकि रचनाओं में प्रताप सहगल का 'अनहदनाद' यशपाल वैद का 'समय के साथ–साथ' गुलशनराय का 'जलजला' और मनोहर श्याम जोशी का 'हमजाद' यह औपन्यासिक कृतियां अत्यंत उल्लेखनीय रही है।

दसवें दशक में सबसे अधिक और प्रभावी उपन्यास ग्रामांचलिक दिखायी देते हैं। इस प्रवृत्ति को देखकर ही अनेक समीक्षकों ने इस दशक को औपन्यासिक समृध्दि का दशक माना जाता है। वैसे हिंदी उपन्यास विधा के विकास को जब हम देखते है तो यह स्पष्ट दिखायी देता है कि सन 1950 के आगे आंचलिक उपन्यासों की प्रकृति अधिक मात्रा में रही है। रेणु और नागार्जुन की रचनाओं ने इस प्रवृति को विकसित करने में अहम् भूमिका निभायी है। इसी कारण ही ऑचलिकता हिंदी उपन्यास की विशेष प्रवृत्ति रही है। दसवें दशक में यह प्रवृति अपने पुरे सामर्थ्य के साथ प्रकट हुई है। उपन्यासकारों ने अत्यंत सूक्ष्म और घुमावदार ऐसे ग्रामांचल को प्रकट करने में सफलता प्राप्त की है। ग्रामांचल के यथार्थ की अंदरुनी हरकतों को पुरे सामर्थ्य के साथ संप्रेषित करने में हिंदी के औपन्यासिक लेखकों को सफलता प्राप्त हुई है। ग्रामांचल को एक चुनौती समझकर उपन्यासकारों ने ग्रहण कर उसे सफलतापूर्वक चित्रित किया है। इसी कारण ग्रामांचल से संबंधित उपन्यास दसवें दशक के ग्रामांचलिक उपन्यासों पर प्रकाश डालने की कोशिश की है।

दसवें दशक के ग्रामांचल पर आधारित उपन्यासों में 'इद्नमम' 'अल्मा कबुतरी', 'चाक' 'मैत्रेयी पुष्पा के' चर्चित उपन्यास हैं। विवेकी राय का 'मंगल भवन' रामदरश मिश्र का 'बीस बरस' ज्योतिष जोशी का 'सोन बरसा' संजीव का 'जंगल जहॉ शुरु होता है', भगवान दास का 'काला पहाड' हबीब कैफी का 'गमना' मिथिलेश्वर का 'यह अंत नहीं', गिरिराज किशोर का 'यातना घर', श्री प्रकाश मिश्र

का 'जहां बांस फुलते हैं', जयप्रकाश कर्दम का 'छप्पर' और प्रभा खेतान का 'छिन्नमस्ता' उल्लेखनीय रचनाएँ रही है। इन उपन्यासों में प्रामाणिक यथार्थबोध, प्रयोगशील शिल्प, कथा के अनुरुप भाषा और परिवर्तन का भी वैचारिकता के कारण दसवें दशक के अत्यंम चर्चित ग्रामांचलिक उपन्यास रहे हैं। ग्राम और अंचल से संबंधित अत्यंत विश्वसनीय कथा के कारण ये उपन्यास विशेष आकर्षण का केंद्र रहे हैं। मुख्यतः इन उपन्यासों में जो आम आदमी है। विशेष रुप से किसान या मजदूर है। उसके जीवन संघर्ष को केंद्र में रखकर ही इन उपन्यासों का निर्माण हुआ है या आंचलों में जो परिवर्तन हो रहा है और मूल्यों का जो विघटन हो रहा है उसका पुरे सामर्थ्य के साथ इन उपन्यासों में अभिव्यक्त किया है।

इसके साथ ही शोषितों के शोषण के संबंध में विरोध का भाव इन उपन्यासों में प्रभावी रुप में अंकित है। ग्राम या आंचलिक जीवन में आये प्रदुषण को दूर कर आदमी चैन की सांस लेगा। इस दृष्टि से भी अनेक उपन्यास साकार हुए है। इस प्रकार विशेष उल्लेखनीय उपन्यास है 'चाक', 'सोनबरसा' हिंदी भाषा को एक नयी शब्दावली देने का कार्य इन उपन्यासों ने किया है। भारत का सही रुप या गॉव या अंचलों में ही दिखायी देता है। लेकिन वैश्विक बदलाव के कारण इन गांवों तथा आंचलों में भी परिवर्तन हो रहा है। यह परिवर्तन कभी रचनात्मक रुप में दिखायी देता है तो कभी विध्वंसात्मक रुप में भी दिखायी देता है। लोकसंस्कृति जो अनेक मूल्यों से भरी हुयी थी वह अब बदलाव के कारण अपसंस्कृति से प्रभावित हो रही है। दसवें दशक के अनेक ग्रामांचलिक उपन्यासों में इस संवेदना को प्रभावी रुप में प्रकट किया।

संदर्भ ग्रंथसूचि –

1. डॉ.इंदिरा जोशी – हिंदी आंचलिक उपन्यास, उद्‌भव और विकास
2. डॉ.उषा डोगरा.– हिंदी के आंचलिक उपन्यासों का लोकतात्विक विमर्श
3. फणीश्वरनाथ रेणु – मैला आंचल
4. कुमार सर्वेश – हिंदी साहित्य का इतिहास
5. रामचंद्र तिवारी. – हिंदी का गद्य साहित्य

http://www.ksijmr.com